पाठ्य-सामग्री
हिन्दी — वर्ग-12

— चन्द्रेश्वर प्रसाद सिंह
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
अल-हफ़ीज़ कॉलेज,
आरा

प्रश्न — तुलसीदास का कवि-परिचय लिखिए।
अथवा — तुलसीदास के जीवन-वृत्त और उनकी काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालें।

उत्तर — भक्तिकाल की रामभक्ति शाखा के प्रतिनिधि कवि गोस्वामी तुलसीदास हिन्दी के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि हैं। उनके ग्रंथों की लोकप्रियता आज पाँच सौ वर्षों के बाद भी यथावत है। विशेषतः रामचरितमानस, जो उनकी अक्षय कीर्ति का आधार है, एक ओर सामाजिक आदर्शों की प्रतिष्ठाभूमि है तो दूसरी ओर समन्वय की विराट् चेष्टा है। इस ग्रंथ की पहुँच घर-घर तक है। यह तुलसीदास के रचनात्मक पौरुष का प्रमाण है कि वाल्मीकि कृत 'रामायण' की जगह 'रामचरितमानस' को ही आम जनता रामायण समझती है। यह साहित्य का अनुपम ग्रंथ तो है ही, धर्मशास्त्र और व्यवहारशास्त्र के रूप में भी प्रतिष्ठित है तथा आचारशास्त्र और नीतिशास्त्र के रूप में उद्धृत की जाती है। विनय पत्रिका, कवितावली और दोहावली तुलसीदास की अन्य महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं।

अनेक मध्यकालीन कवियों की तरह तुलसीदास की जन्मतिथि, जन्मस्थान और माता-पिता आदि पर विद्वानों में मतभेद है। इनके जीवन-वृत्त का अधिकांश जनश्रुतियों पर आधारित है। अधिकांश विद्वानों ने अब उनका जन्मकाल 'घटरामायण' के आधार पर सन् 1533 ई० मान लिया है। इसी तरह राजापुर को उनके जन्मस्थान की मान्यता मिली है। उनके पिता आत्माराम दूबे और माता हुलसी का उल्लेख यत्र-तत्र मिलता है। उनकी पत्नी का नाम रत्नावली और मृत्यु-संवत् 1680 (सन् 1623 ई०) बताया गया है। काशी का अस्सीघाट उनका मृत्यु-स्थल है। यह सब कुछ जनश्रुतियों पर आधारित है।

तुलसीदास के जीवन-वृत्त में दो बातें असंदिग्ध हैं। इनके काव्य-साक्ष्य मौजूद हैं। पहली यह कि शैशवावस्था में ही माता-पिता ने इनका परित्याग कर दिया था। यदि अभुक्तमूल नामक अशुभ कहे जाने वाले नक्षत्र में पैदा होने के कारण किसी पुत्र को शैशव-काल में ही परित्यक्त होना पड़े तो यह उसके भाग्य की विडम्बना और रूढ़िग्रस्त समाज का परिचायक है। दूसरी यह कि तुलसीदास का बचपन दरवाजे-दरवाजे भीख माँगकर व्यतीत हुआ। इससे पता चलता है कि उन्हें कितना आत्मसंघर्ष करना पड़ा होगा —

→

"जायो कुल मंगन बधावनो बजायो सुनि
भयो परिताप पाप जननी जनक को।
बारें तें ललात बिललात द्वारे-द्वारे पुनि
जानत हौं चारि फल चार ~~जनक~~ को॥"

कहा जाता है कि अपनी पत्नी की प्रेरणा से भक्ति की ओर उन्मुख होने वाले तुलसीदास पहले देहासक्ति के शिकार थे। एक दिन जब वे बिना बुलाए अपनी पत्नी के पास उसके मायके जा पहुँचे तब पत्नी ने उन्हें खूब फटकार लगायी। हाड़-मांस के नश्वर शरीर को छोड़कर रामभक्ति से अपना लोक-परलोक सुधारने के लिए कहा। ~~तुलसीदास~~ तुलसीदास की आँखें खुल गईं। देहासक्ति ईश्वर की परम अनुरक्ति में बदल गई। इसी को भक्ति कहा गया है—"सा परानुरक्तिरीश्वरे।" (शांडिल्य भक्तिसूत्र) आगे चलकर वे बाबा नरहरिदास के शिष्य हो गए। अपने इन्हीं दीक्षा-गुरु से उन्होंने शूकर क्षेत्र में रामकथा सुनी थी। शेष-सनातन के पास काशी में निरंतर सोलह-सत्रह वर्ष रहकर तुलसीदास ने वेद, पुराण, उपनिषद, रामायण, भागवत आदि का गंभीर अध्ययन किया और तीर्थस्थानों की यात्रा करने के उपरान्त काशी में रहने लगे।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने तुलसीदास के बारह ग्रंथों को प्रामाणिक माना है। रामचरितमानस, विनयपत्रिका, कवितावली, दोहावली, गीतावली, जानकी मंगल, पार्वतीमंगल, बरवै रामायण, रामाज्ञा प्रश्न, रामलला नहछू, वैराग्य-संदीपनी और कृष्ण गीतावली। इन सभी रचनाओं में भाव-वैविध्य है, किन्तु सबका रचनात्मक उद्देश्य है—रागात्मिका वृत्तियों को जगाकर सामाजिक विशृंखलता को दूर करना। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार नाथपंथियों के प्रभाव को कम करना समाज की तात्कालिक आवश्यकता थी, क्योंकि उनका वैराग्य व्यक्ति को समाज से दूर करता था। इसलिए तुलसीदास ने श्रुतिविरोधी तत्वों पर प्रहार किया—

"श्रुति सम्मत हरिभक्ति पथ, संयुत बिरति बिबेक।
तेहिं न चलहिं नर मोहबस, कल्पहिं पंथ अनेक॥"

तुलसीदास ने भक्ति मार्ग को वेदसम्मत बताया और संतमत की भर्त्सना की क्योंकि वह वेद-निंदक था—

"साखी सबदी दोहरा, कहि कहिनी उपखान।
भगति निरूपहिं भगत कलि, निन्दहिं वेद पुरान॥"

तुलसीदास ने अनेक मतों और सम्प्रदायों में

→

बहुरि बदनु बिधु अंचल ढाँकी। पिय तन चितै भौंह करि बाँकी॥
खंजन मंजु तिरीछे नैननि। निज पति कहेउ तिन्हहि सिय सैननि॥"

तुलसीदास कथा के मार्मिक प्रसंगों का वर्णन बड़ी तल्लीनता से करते हैं। उन्हें पता होता है कि मर्मस्पर्शी प्रसंगों को विस्तार से चित्रित करने की कहाँ आवश्यकता है। वनगमन के पूर्व दशरथ-कैकेयी संवाद और चित्रकूट-सभा के गंभीर प्रसंगों को पहचान कर कवि वहाँ कुछ देर के लिए ठहर जाता है। पाठक भी मग्न और भावविह्वल होने लगता है। यह तुलसीदास के प्रबंधकार का काव्य-कौशल है।

भाषा-शैली की दृष्टि से तुलसीदास की समकक्षता हासिल करनेवाला कोई दूसरा कवि नहीं दिखायी पड़ता। भाषा सम्बन्धी तुलसीदास का दृष्टिकोण यह है कि वह सरल, सुगम और सहज सम्प्रेषण से युक्त हो तथा प्रतिष्ठित विद्वानों में भी समादृत हो। उन्होंने लिखा है— 'सरल कवित कीरति बिमल सोइ आदरहिं सुजान।" इसके अतिरिक्त 'का भाषा का संस्कृत प्रेम चाहिए साँच' कहकर उन्होंने प्रेम को महत्त्व दिया है, भाषा संस्कृत हो या बोली (लोकभाषा), इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। इस दृष्टि से उन्होंने लोकभाषा का संस्कार किया है, उसे परिष्कृत किया है क्योंकि तुलसीदास संस्कृत और काव्यशास्त्र के पंडित थे। उनकी भाषा एक ओर जहाँ लोगों की जुबान पर जल्दी चढ़ जाती है और लोग आसानी से यत्र-तत्र उद्धृत करते हुए देखे जाते हैं तो दूसरी काव्य-मर्मज्ञों के मंथन के लिए भी उसमें बहुत कुछ है। उसमें अनेक रसों का प्रवाह है, छंदों की छटा है तथा वह अलंकारों से सुसज्जित है।

तुलसीदास ने तत्कालीन दोनों काव्यभाषाओं— अवधी और ब्रज में समान दक्षता का परिचय दिया है। इसी तरह प्रबंध काव्य और मुक्तक काव्य— दोनों को सफलतापूर्वक अपनाया है। चरित्र-चित्रण, देशकाल-चित्रण, मानव-रूप चित्रण, प्रकृति-चित्रण आदि में विविध प्रकार के चित्र उरेहने में उन्हें अपार सफलता मिली है। हम कह सकते हैं कि तुलसीदास की कविता का भावपक्ष जितना सशक्त और प्रभावी है, उनका कलापक्ष भी उतना ही कथ्यानुरूप और आकर्षक है।

[illegible]
12/10/21

विभक्त समाज को जोड़ने के लिए समन्वयवादी दृष्टिकोण अपनाया। प्रायः सभी आलोचकों और इतिहासकारों ने एकमत से स्वीकार किया है कि तुलसीदास समन्वयवाद के अवतार थे। इसकी कार्यात्मक क्षमता उनमें भरपूर थी। इसीलिए उन्हें शैव, शाक्त, वैष्णव, निर्गुण, सगुण आदि मतवादों के आभ्यंतर वैमनस्य को दूर करने में सफलता मिली। उदाहरण के लिए निर्गुण और सगुण का समन्वय करते हुए लिखा —

"जेहि इमि गावहिं बेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान।
सोई दसरथ सुत भगतहित, कोसलपति भगवान॥"

तुलसी के राम और शिव–दोनों में कोई छोटा-बड़ा नहीं है। दोनों एक-दूसरे को श्रेष्ठ बताते हैं। राम कहते हैं —

"सिवद्रोही मम दास कहावा। सो नर मोहि सपनेहुँ नहिं भावा॥"

इसी तरह शिव राम की स्तुति करते हैं, राम को अपना आराध्यदेव मानते हैं —

"सोई मम इष्टदेव रघुबीरा। सेवत जाहि सदा मुनि धीरा॥"

यद्यपि तुलसीदास ने वर्णाश्रम धर्म की स्थापना पर ज़ोर देते हुए आदर्श रामराज्य की परिकल्पना की है, किन्तु उनका भक्तिमार्ग सर्वसमावेशी है जिसमें छोटे-बड़े, ऊँच-नीच का भेदभाव मिट जाता है। इसीलिए श्रीराम ब्राह्मणों-ऋषियों की पूजा करते हैं तो केवट-निषाद को गले भी लगाते हैं और शबरी के जूठे बेर भी खाते हैं।

समन्वयवाद और लोक-मर्यादा की स्थापना तुलसीदास की सबसे बड़ी देन है। उन्होंने गार्हस्थ्य जीवन की विभिन्न परिस्थितियों को सामने रखते हुए टूटते-बिखरते परिवार और समाज के आदर्श खड़े किए। लोक-मानस को आश्वस्त करने के लिए माता-पिता, पिता-पुत्र, पति-पत्नी, स्वामी-सेवक, राजा-प्रजा आदि के कर्तव्य-निर्वाह के आदर्श प्रस्तुत किए। राम, सीता, भरत, लक्ष्मण, दशरथ, हनुमान आदि इसके उदाहरण हैं। तुलसी के राम तो स्वयं मर्यादा-पुरुषोत्तम हैं। उनके सोच और व्यवहार में ऐसा कुछ नहीं है जो लोक-मर्यादा के दायरे के बाहर हो। सबकुछ सामाजिक व्यवस्था के अनुरूप। 'रामचरितमानस' और 'कवितावली' के वन-गमन प्रसंग में तुलसीदास जिस तरह सीता को ग्राम-वधुओं के साथ बातचीत में संलग्न दिखाते हैं, वह लोक के सम्मान का आदर्श है। उनका लोक-लाज, शील-संकोच भारतीय समाज की मर्यादा के अनुरूप है। जैसे —

"तिन्हहिं बिलोकि बिलोकति धरनी। दुहुँ सँकोच सकुचति बरबरनी॥
सहज सुभाय सुभग तन गोरे। नाम लखनु लघु देवर मोरे॥

→